ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2014; 1(1): 468-470
www.allresearchjournal.com
Received: 16-10-2014
Accepted: 20-11-2014

डॉ. राका शर्मा
रीडर, संस्कृत विभाग, एन.के.बी. एम.जी कॉलेज, चंदौसी, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ. राका शर्मा
रीडर, संस्कृत विभाग, एन.के.बी. एम.जी कॉलेज, चंदौसी, उत्तर प्रदेश, भारत

शिशुपालवधम् का सांस्कृतिक अध्ययन

डॉ. राका शर्मा

प्रस्तावना

संस्कृति वह प्रक्रिया है जिससे किसी देश के सर्वसाधारण का व्यक्तित्व निष्पन्न होता है। इस निष्पन्न व्यक्तित्व के द्वारा लोगों को जीवन के प्रति एक अभिनव दृष्टिकोण मिलता है। कवि इन अभिनव दृष्टिकोण के साथ अपनी नैसर्गिक प्रतिभा का सामंजस्य करके सांस्कृतिक मान्यताओं का मूल्यांकन करते हुए उनकी उपादेयता ओर देयता प्रतिपादित करता है।[1]

महाकवि माघ ने अपने काव्य में तत्कालीन भारतीय जीवन का सुन्दर चित्र उपस्थित किया है।

उस समय वर्णाश्रमव्यवस्था जोरों पर थी। जो चारों वर्णों में सम्मिलित नहीं थे , उनकी संतान वर्णसंकर कहलाती थी । वर्णसंकर संतान का समाज में आदर नहीं होता था । द्विजवर्ण ही कुलीन समझते थे । वर्णव्यवस्था ने जाति–पांति का स्वरूप धारण कर लिया था द्विज, वैष्णव, मुनि, भूपाल, सिद्ध, महात्मा, यादव,

विद्वान्, वणिक्, साधु, सुर, असुर, शैव किन्नर आदि शब्दों से समाज में विविध जातियों तथा वर्गों के रहन–सहन की अभिव्यंजना होती है।[2]

उस समय शिष्टाचार का विशिष्ट स्वरूप था–

निवर्त्य सोऽनुव्रजतः कृतानतीनतीन्द्रियज्ञाननिधिनेभः सदः।
समातदत्सादितदैत्यसंपदः पदं महेन्द्रालयचारू चक्रिणः।। [3]

आयु या ज्ञान में अपने से जो वृद्ध होता था, उसका उचित सम्मान किया जाता था। जब वह कहीं जाता था, तब उसको आदर पूर्वक विदाई दी जाती थी।

हाथ जोड़कर प्रणाम करना भी उस युग की सभ्यता थी।शास्त्रो की व्यवस्था का भावनापूर्वक पालन किया जाता था । अर्घ्य आदि से वृद्धों की विधिवत पूजा की जाती थी। पूजा के पश्चात् अपने हाथ से दिये गये आसन पर वे अतिथि विराजमान होते थे।4 परिजनों में ज्येष्ठ, अपने से जो कनिष्ठ होता था , उसके मिलने के अवसर पर पहले उसका सिर सूँघता था, तब फिर कहीं दूसरी बातें होती थीं। सिर सूँघना, माथे पर हाथ रखना आशीर्वाद के द्योतक होते थे। राजा युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण का सिर सूँधा था, फिर परस्पर मिले थे –

शिरसि स्म जिघ्रति सुरारिबन्धने छलवामनं विनयवामनं तदा।
यशसेव वीर्यविजितामरद्रुमप्रसवेन वासितशिरोरूहे नृपः।।

समान आयु वाले लोग परस्पर सीने से सीना लगाकर मिलते थे। स्त्रियॉ भी उसी तरह मिलती थीं।[5] मध्यकालीन स्त्रियॉ शिक्षित थीं अथवा नहीं, इस बात का प्रस्तुत महा काव्य से कुछ भी पता नहीं चलता, परन्तु रणभूमि जाती थीं तथा अपने पति से पूर्व ही मरना पसन्द करती थीं।[6] वैसे स्त्रियाँ प्रायः घरेलू जीवन ही बिताती थी परन्तु बाल्यकाल में कदाचिद– राज बालिकाओं को अपने घरों में ही अन्य प्रकार की शिक्षा के साथ–साथ शस्त्रशिक्षा भी दी जाती होगी, जिससे समय पड़ने पर अपने कुल की मर्यादा की रक्षा कर सकें तथा यदि आवश्यकता हो तो शत्रु से भी मोरचा ले सकें। ऐसे सामाजिक अवसर भी होते थे जहॉ स्त्री–पुरूष एक विशेष मर्यदा का निर्वाह करते हुए मनोरंजन में निर्बाधरूप से प्रयुक्त हुआ करते थे। रैवतक की उपत्यका के दृश्य इस सम्बध में पर्याप्त प्रकाश डालते हैं।[7]

विवाह के पूर्व यह देख लिया जाता था कि कहीं वर या वधु एक ही गोत्र के तो नहीं है। विवाह के बाद पति का गोत्र ही कन्या हा गोत्र हो जाता था। पति को इसलिये 'गोत्रभिद' की उपाधि दी गयी है। ससुराल में रहती हुई स्त्रियॉ पुरूषों के पश्चात् रात्रि में शयन करती थी तथा पुरूषों से पूर्व ही ब्रहम मुहूर्त में जाग जाती थी।[8]

महाकवि माघ ने अपने महाकाव्य के तृतीय सर्ग में जहाँ कवित्व शक्ति का परिचय देते हुये द्वारकानगरी तथा उसमें निवास करने वाली स्त्रियों का वर्णन किया है, वहॉ वस्त्रों के झीने, पतले एवं बारीक होने का भी सुन्दर वर्णन सुन्दरतापूर्वक हुआ है।9

प्रस्तुत महाकाव्य में घूँघट के संकेत स्पष्ट रूप में मिलते हैं। स्त्रियॉ मुख पर घूँघट डालती थी तथा पर्दे के भीतर रहती थीं।10 यात्रा के समय घूँघट न निकालने पर कोई दोष नहीं होता था । महाकवि माघ लिखते हैं कि जब रमणियाँ अश्वों पर बैठ कर जा रही थीं. उस समय उनके मुख घूँघट से ढके हुये नहीं थे।11

स्त्रियों का सहज स्वभाव है आभूषण प्रिय होना। महाकवि माघ के शिशुपाल की स्त्रियॉ भी आभूषण प्रिय थीं। वे कानों में कर्णफूल पहनती थीं। नूपुर, करधनी, मोतियों की माला तथा कगंन उनके आभूषणों में प्रमुख थे। स्त्रियॉ पति के विदेश चले जाने पर अपना कंकण उतार देती थीं।12

वे पैरों में महावर लगाती थीं। शरीर पर कभी–कभी लाल चंदन का लेप भी करती थीं। शरीर पर अंगराग तथा ललाट पर तिलक लगाती थी। होठों पर अलते का रंग, कपोलों पर लोध्रपुष्प की रज तथा नेत्रों में अंजन लगाती थीं

अधरेष्वलक्तकरसः सुदृशां विशदं कपोलभुवि लोध्रजः ।
नवमंजनं नयनपंकजयोर्बिभिदे न शंकनिहितात्पयतः ।। [13]

जो स्त्रिया राजघराने की होती थीं, वे कुसुमल रंग की साड़ी पहनना पसन्द करती थीं। वे ताम्बूल खाती थी तथा छाता भी लगाती थी स्त्रियॉ पतिव्रत का पूर्णतया पालन करती थीं। उस समय सती–प्रथा जोरी पर थी। कवि का कहना है कि जो स्त्री सती होती है वह दूसरे जन्म में अपनी आकांक्षा की पूर्ति करके परम भाग्यशालिनी होती है। 14

पुरुष प्रायः दो प्रकार के वस्त्र पहनते थे– एक तो अधो वस्त्र जो धोती के रूप में होता था। दूसरा उर्ध्व वस्त्र जिसको दुपट्टा कहते थे। प्रायः श्वेत रंग के दुपट्टे ही पुरूष पहना करते थे। पुरुष शरीर पर सिला हुआ वस्त्र धारण करते थे या नहीं कहीं पर भी उल्लेख नहीं मिलता है। न ही शिरोवस्त्र या पगड़ी का उल्लेख कहीं पर किया गया है । पुरुष भी आभूषण धारण करते थे। उनके गले में मोतियों की माला होती थी। धोती पर कदाचित् करधनी पहनी जाती थी। द्विजयज्ञोपवीत धारण करते थे । उनके नंगे शरीर पर सूत्र निर्मित पीले अथवा सफेद रंग का यज्ञोपवीत रहता था । उन दिनों पुरुष दाढ़ी तथा मूछ रखा करते थे तथा उनके सिर पर शिरवा होती थी ।

उस युग में बहुविवाह तथा उपपत्नी रखने की प्रथा प्रचलित थी और यह प्रथा उच्चकुलीनता एंव शालीनता का सामाजिक चिन्ह मानी जाती थी । उपपत्नी का वर्णन महाकवि माघ ने अनेकशः किया है। जिस प्रकार स्त्रियों में सती–प्रथा थी, उसी प्रकार असमर्थ वानप्रस्थी ऊँचें शिखर से शिला पर कूदकर इस कामना से प्राण त्यागते थे कि उन्हें स्वर्ग में अप्सराओं का साथ मिलेगा।15

महाकवि माघ का काल विलासमय जीवन का काल था । अतः उस समय मदिरापान भी जोरों पर था। दसवें सर्ग में सुरतवर्णन के अन्तर्गत मदिरापान का वर्णन किया गया है। पुरुष तथा स्त्री विशेष अवसरों पर मदिरा में मस्त हाकर भोगमय जीवन व्यतीत करते थे। युद्ध हुआ ही करते थे तथा उन युद्ध में सेना के प्रयाण के समय वेश्याये तथा मदिरा से भरी गाड़ियाँ चला करती थी। इससे प्रतीत होता है वेश्याओ का भारतीयों के सांस्कृतिक जीवन में एक विशेष प्रकार का योग रहा है। 16

उस समय एक और मान्यता थी कि विवाह के समय नवविवाहिता पुत्री को पिता तथा नवपुत्र वधु को श्वसुर अपनी गोद में बिठाकर पहनने के पुत्री आभूषण दिया करते थे।17

कन्यायें जब पतिगृह जाती थीं उस समय माता–पिता रुदन करते थे । उस समय का दृश्य बड़ा ही करुणोत्पादक होता था । विदा के समय माता– पिता, सगे–सम्बन्धी, आस–पास के पड़ोसी, भाई–बहन ये सब लगभग ग्राम की सीमा तक पहुँचाने जाया करते थे । कन्या भी गले में गला डालकर विदा की सीमा तक रोती हुई जाती थी।18

नगरों में रहने वाले लोग उद्योग तथा व्यापार करते थे। वे राज–सेवा भी करते थे। ग्रामीण लोगों की आजीविका का प्रमुख साधन खेती ही थी। ग्रामीणों का जीवन उस समय आनन्दप्रद था । वे गोचर भूमि में मंडलाकार बैठकर विभिन्न रूस से मनोविनोद किया करते थे →

गोष्ठेषु गोष्ठीकृतमण्डलासना–
न्सनादमुत्थाय मुहुः स वल्गतः ।
ग्राम्यान्पश्यत्कपिशमं पिपासतः
स्वगोत्रसंकीर्तनभावितात्मनः ।।

वे आपस में गप्पें लड़ाते तथा नाचकूद और संगीत गोष्ठी में भाग लेते थे। भजन आदि का भी लोगों को शौक था। गाँवों में कहीं गाये दुही जाती थीं तो कहीं धान के खेत की रखवाली होती थी, कहीं नारियाँ गीत गाती हुई हरिणों को मंत्रमुग्ध करती थीं। गावों का जीवन शान्तिमय तथा सुखी था ।19

यातायात के साधनों में रथ अश्व, गज, ऊँट, खच्चर आदि का उल्लेख कवि ने किया है ।20

विभिन्न कलाओं– संगीत, नृत्य, वाद्य आदि के प्रति लोगों में रुचि थी। संगीत के स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, मण्डल आदि का उल्लेव कवि ने किया है। नृत्य का वर्णन भी प्रस्तुत महाकाव्य में प्राप्त होता है साहित्य तथा नाटय से सम्बन्धित शब्दार्थ –सत्कवि, रसभाव, ओज, प्रसाद स्थायी संचारी, रस, पात्र, भावशुद्धि मुख नाटक आदि का उल्लेख भी प्राप्त होता है।21

द्वारकापुरी तथा युधिष्ठिर की सभा के वर्णन से स्थापत्य कला की जानकारी प्राप्त होती है। गृह सद्म, पुरवीथि, संसद, गृहपंक्ति, गृहरत्नभित्ति, भवन, कपोतपाली, पंक्ति, प्रसादश्रृंग, पुर, भित्ति, सौधपंक्ति, गवाक्ष, निकेत आदि शब्दों का उल्लेख स्थापत्य कला के उत्कर्ष की ओर इंगित करता है। [22]

ज्योतिष की जानकारी के संकेत भी प्राप्त होते हैं।23

जनता में उस समय रूढ़ियाँ, अंधविश्वास भी प्रचलित थे । शकुन–अपशकुनों की चर्चा भी इस कारण बढ़ी। लोग जादू–टोनो तथा भूत–प्रेत आदि में विश्वास करने लगे थे । प्रस्तुत महाकाव्य में छींकने, चूड़ी टूट जाने आदि अपशकुनों का वर्णन मिलता है।। [24]

उस समय भारतीयों का भोजन गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, दूध, गुड़ और शक्कर था । मांसाहार पाप समझा जाता था । महाकाव्य में खुले रूप मे खाने का कोई स्पष्ट संकेत नहीं है, किन्तु कछ श्लोको मे इस बात के संकेत अवश्य प्राप्त होते हैं।[25]

महिष, तुरगं, बिलाव, कपोत, चातक, उल्लू, गरूड़, मयूर, भ्रमर, शुक, सारस, कोयल, आदि का उल्लेख किया गया है।[26]

वृक्ष और पुष्पों में कुरूबक, पलाश, चम्पा, अशोक, कदम्ब, माधवी, शिरीष, नवमल्लिका, पाटल, तमाल, कन्दली, उत्पल, जपा, आसन, वाण, सरोज, सप्तच्छद, प्रियंगुलता, कुन्द, लवंग, कुरज, कदली, लवली, ताल, नारिकेल आदि नामों का उल्लेख मिलता है।[27]

यमुना, गंगा आदि नदियों तथा रैवतक, अंजन, महानील, उदयाचल, सुमेरू, त्रिकूट, मन्दर, गोवर्धन, हिमाचल, विन्ध्याचल आदि पर्वतों का उल्लेख किया गया है।28

द्वारका, इन्द्रप्रस्थ, माहिष्मती, अमरावती, कच्छ प्रदेश आदि नगरों तथा प्रदेशों का उल्लेख कवि ने किया है।29

सन्ध्या, वंदना, हवन आदि धार्मिक कृत्यों का विशेष महत्व था । मन्त्रों द्वारा आहूतियाँ दी जाती थीं तथा मन्त्रों के जाप हुआ करते थे।30

इस युग तक आते–आते जहाँ पर सूर्य की पूजा होती थी, वहाँ रूद्र के साथ–साथ विष्णु देवता का महत्व भी बढ़ गया था।31

उस युग में दिव्यदेवताओं में वह सबसे अधिक प्रतिष्ठित तथा श्रेष्ठ माने जाने लगे थे। यह धारणा दिन– प्रतिदिन दृढ़ होती जा रही थी कि विष्णु भगवान् पृथ्वी को संकट मुक्त करने हे लिये बार–बार अवतार धारण करते हैं। राम तथा कृष्ण को विष्णु का अवतार माना जाने लगा था।

अवतार–भावना इस युग तक आते–आते दृढ़ हो चुकी थी। पौराणिक कथाओं पर पूर्ण विश्वास हो चला था । यही कारण है कि कवि नारद जी द्वारा श्रीकृष्ण को बार–बार अवतार प्राप्त करने का स्मरण दिलाते है –

'निवेशयामासिथ हैलयोद्धृत फणाभृतां छादनमैकमोकसः ।
जगत्त्रयैस्थपतिस्त्वमुच्यकैरहीश्वरस्तम्भशिरः सु भूतलम् ।।
लघुकरिष्यन्नतिभारभंगुराममूं किल त्वं त्रिदिवादवातरः ।
उदूढलोकत्रितयेन सांप्रतं गुरुर्धरित्रि क्रियतेतरां त्वया ।।

14 वे सर्ग के अन्तिम श्लोकों में भगवान विष्णु के विभिन्न अवतारों– वराह, नृसिंह, वामन, मोहिनी, परशुराम, दत्तात्रेय आदि के बारे में सुदंरतापूर्वक वर्णन किया गया है ।

इस अवतार–भावना के साथ ही साथ सृष्टि सम्बन्धी यह पौराणिक कल्पना भी उस युग में घर कर चुकी थी कि पृथ्वी शेषनाग के फणो पर स्थित है । जब नारद जी भूतल पर पैर रखने लगे तब पृथ्वी का बोझ इतना अधिक हो गया कि अधः स्थित सर्पों की फणायें प्रयत्नपूर्वक उपर उठाने पर भी झुकती जा रही थीं तथा वे पृथ्वी का बोझ बड़ी कठिनाई से ही सम्भाल पा रहे थे।32

उस समय के राजा अत्यन्त वीर होते थे । उन्हें या तो क्रोध आता ही नहीं था यदि क्रोधभड़क उठता था तो उस क्रोध को शान्त करना कठिन होता था। राज्य युद्ध–राजनीति के सहारे ही चलते थे । शिशुपालवध में जिस राजनीति की चर्चा की गयी है, वह युद्ध की पृष्ठभूमि के रूप में ही की गयी है।33

उस समय छोटे–छोटे मांडलिक राजा थे। गणतंत्र राज्य था । युद्ध का. वह समय था किन्तु फिर भी कृषि–गौपालन तथा व्यापार की अवस्था उन्नत थी। राजनैतिक मतभेद भी रहा करते थे, किन्तु उचित बात स्वीकार कर ली जाती थी सन्धि। विग्रह के नियमों से राजा परिचित रहते थे। श्रीकृष्ण, उद्धव तथा बलराम और युद्धिष्ठिर तथा भीष्म के संवादों से उस समय की राजनीति की बातों का पता चलता है। सेना के विभाग, उपविभाग, दुर्ग–रचना, अभियान, युद्धकला

आदि से कवि पूरी तरह परिचित है। ऐसे अवसरों पर कवि की विद्वत्ता भी प्रकट होती है।

उस समय यद्यपि राजनीतिक अशान्ति की किन्तु उस अशान्ति को दूर करके शान्ति स्थापित करने वाले प्रतिहारवंशी उस समय वहा थे। प्रस्तुत काव्य मे इसका अच्छा वर्णन मिलता है। श्रीकृष्ण शान्ति की व्यवस्था करते हुए द्वारकापुरी में रहते थे। कहीं कोइ शिशुपाल जैसा उपद्रवी होता था तो वे सेना सहित उस उपद्रवकारी शासक के शासन को नष्ट करने के लिये चल पड़ते थे तथा सर्वत्र शान्ति विराजमान रहती थी ।34

राजा भी प्रजा का पूरा–पूरा ध्यान रखता था । वह यथासमय प्रजा का निरीक्षण करता रहता था।35

वह समय युद्ध का था, अतः नगर–निर्माण तथा उनकी रक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था । उस समय नगरियों के चारों ओर रक्षा के लिये परकोटों का निर्माण किया जाता था । जनता के आवागमनार्थ चार–पाँच या इससे भी अधिक द्वार होते थे ।36

बड़ी–बड़ी नगरियाँ देखने योग्य थीं, जहाँ पर बड़ी–बड़ी अट्टालिकाएँ, तोरण द्वार तथा राजमार्ग थे। राजमार्गों पर सुगन्धित द्रव्यों का छिड़काव होता था।37

प्रातःकाल हो जाने पर मन्दिरों, राजगृहों तथा महानुभावों के घर पर नौबत बजती थी। इससे लोगों को प्रातःकाल उठकर अपना दैनिक कृत्य करने की सुविधा रहती थी।38

नगर के चारों ओर खाई भी होती थी । कहीं–कहीं पर दुर्ग भी बनाए जाते थे। इन सब दुर्गों में नगर रक्षक सेना योद्धाओं से सुसज्जित रहती थी।39

संदर्भ

1. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, डा. रामजी उपाध्याय पृ01
2. शिशुपालवधम्1 / 25,1 / 59,1 / 15,24,25,29,2 / 9,26,31,58,3 / 32,38,1 / 73,35,61,75,35,61,75,36–43,3 / 70,4 / 38
3. शिशुपालवधम् 1 / 11
4. शिशुपालवधम 1 / 15
5. शिशुपालवधम् 13 / 12,14
6. शिशुपालवधम् 9 / 13
7. शिशुपालवधम् 4 सर्ग
8. शिशुपालवधम् 9 / 30
9. शिशुपालवधम् 3 / 56
10. शिशुपालवधम् 5 / 17
11. शिशुपालवधम् 12 / 20
12. शिशुपालवधम् 3 / 69
13. शिशुपालवधम् 9 / 46
14. शिशुपालवधम् 1 / 72,9 / 13
15. शशुपालवधम् 4 / 23
16. शिशुपालवधम् 5 / 26
17. शिशुपालवधम् 3 / 36
18. शिशुपालवधम् 4 / 47
19. शिशुपालवधम् 3 एवं 4 सर्ग, 9 / 32, 12 / 42,38
20. शिशुपालवधम् 3 / 32, 68, 12 / 18,19,24
21. शिशुपालवधम् 1 / 10,13 / 66,2 / 86,2 / 83,87,14 / 50,20 / 44
22. शिशुपालवधम् 13 / 47–55,3 / 52,13 / 28,31,35,15 / 36
23. शिशुपालवधम् 3 / 22,1 / 75,13 / 22
24. शिशुपालवधम् पंचम् सर्ग
25. शिशुपालवधम् 5 / 25–27
26. शिशुपालवधम् 1 / 39,53,6 / 9,69,1 / 4,47,2 / 53,6 / 55,1 / 8,1 / 57,3 / 68, 3 / 51,4 / 24,1 / 53,6 / 44,11,53,75,8
27. शिशुपालवधम् षष्ठ सर्ग, 3 / 81
28. शिशुपालवधम्12 / 60,69,3 / 63,1 / 16,1 / 10,2 / 5,2 / 107,3 / 4,13 / 27,4 / 2
29. शिशुपालवधम 3 / 69,2 / 63,2 / 64,2 / 62,80
30. शिशुपालवधम् 11 / 41,42
31. शिशुपालवधम् 1 / 1
32. शिशुपालवधम् 1 / 34,36,13,23
33. शिशुपालवधम् द्वितीय सर्ग
34. शिशुपालवधम् 1 / 1,11 / 60
35. शिशुपालवधम् 11 / 48
36. शिशुपालवधम् 3 / 69
37. शिशुपालवधम् 13 / 39,11 / 4
38. शिशुपालवधम् 11 / 1
39. शिशुपालवधम् 1 / 45
40. मनुस्मृति, समपादक श्री हरगोविन्दशास्त्री
41. संस्कृत साहित्य का इतिहास श्री बलदेव उपाध्याय